Quest Journals
Journal of Research in Humanities and Social Science
Volume 4 ~ Issue 2 (2016) pp : 27-29
ISSN(Online) : 2321-9467
www.questjournals.org

Research Paper

भारतीय राजनीति में जातिवाद एक चुनौती

डॉ० सुरेंद्र सिंह
व्याख्याता राजनितिक विज्ञानं राजकीय महाविद्यालय बहरोड़ अलवर राजस्थान

भारतीय राजनीति में "परम्परावादी भारतीय समाज में आधुनिक राजनीतिक संस्थाओं की स्थापना हुई।'' स्वाधीनता प्राप्ति के पश्चात भारतीय राजनीति का आधुनिक स्वरूप विकसित हुआ। यह सम्भावना व्यक्त की जाने लगी कि देश में लोकतान्त्रिक व्यवस्था स्थापित होने पर भारत से जातिवाद समाप्त हो जाएगा किन्तु ऐसा नहीं हुआ अपितु जातिवाद न केवल समाज में ही वरन् राजनीति में भी प्रवेश कर उग्र रूप धारण करता रहा।

भारत की जनता जातियों के आधार पर संगठित है। अत: न चाहते हुए भी राजनीति को जाति संस्था का उपयोग करना ही पड़ेगा। अत: राजनीति में जातिवाद का अर्थ जाति का राजनीतिकरण है। जाति को अपने दायरे में खींचकर राजनीति उसे अपने काम में लाने का प्रयत्न करती है। दूसरी ओर राजनीति द्वारा जाति या बिरादरी को देश की व्यवस्था में भाग लेने का मौका मिलता है।

भारतीय राजनीति में जातिवाद एक बड़ी सच्चाई है । जाति व धर्म के आधार पर पार्टियां उम्मीदवारों का चयन व टिकट वितरण करती है। यहाँ तक की मंत्रिमंडल में भी जाति व धर्म के अनुसार गठन कर शक्ति संतुलन साधने का काम किया जाता है। ताकि कि किसी जाति के बहुमत को अपने साथ रखा जा सके। बहुमत के अभाव में सत्ता संभव नहीं हो सकती इसलिए जातिवाद की उपेक्षा संभव नहीं है । इसलिए भारतीय राजनीति में जातिवाद एक आवश्यक बाधा है।

संविधान द्वारा उनको विशेष अधिकार दिए जा रहे है। उन्हें सरकारी पदों और शैक्षणिक संस्थानों में प्रवेश प्राप्ति में प्राथमिकता और छुट दी जाती है। आज की पीढी का प्रमुख कर्त्तव्य जाति - व्यवस्था को समाप्त करना है क्योंकि इसके कारण समाज में असमानता, एकाधिकार, विद्वेष आदी दोष उत्पन्न हो जाते है। वर्गहीन एवं गतिहीन समाज की रचना के लिए अन्तर जातीय भोज और विवाह होने चाहिए। इससे भारत की उन्नति होगी और भारत ही समता वादी राष्ट्र के रूप में उभर सकेगा है।

निःसंदेह जाति प्रथा एक सामाजिक कुरीति है। ये विडंबना ही है कि देश को आजाद हुए सात दशक से भी अधिक समय बीत जाने के बाद भी हम जाति प्रथा के चंगुल से मुक्त नहीं हो पाएं हैं। हालांकि एक लोकतांत्रिक देश के नाते संविधान के अनुच्छेद 15 में राज्य के द्वारा धर्म, मूल वंश, जाति, लिंग, जन्म स्थान के आधार पर नागरिकों के प्रति जीवन के किसी क्षेत्र में भेदभाव नहीं किए जाने की बात कही गई है। लेकिन विरोधाभास है कि सरकारी पद के लिए आवेदन या चयन की प्रक्रिया के वक्त जाति को प्रमुखता दी जाती है।

जाति प्रथा के कारण ही भारत के विभिन्न धार्मिक समूह सामाजिक और राजनीतिक रूप से एक दूसरे के समीप नहीं आ सके जिसके कारण एक सुदृढ़ समाज का निर्माण नहीं हो सका। जाति प्रथा ने अंततोगत्वा देश में विभाजन ही पैदा किया। 'जाति प्रथा उन्मूलन' नामक ग्रंथ में अंबेडकर कहते हैं कि 'प्रत्येक समाज का बुद्धिजीवी वर्ग यह शासक वर्ग ना भी हो फिर भी वो प्रभावी वर्ग होता है।' केवल बुद्धि होना यह कोई सद्गुण नहीं है। बुद्धि का इस्तेमाल हम किस बातों के लिए करते हैं इस पर बुद्धि का सद्गुण, दुर्गुण निर्भर है और बुद्धि का इस्तेमाल कैसा करते हैं यह बात हमारे जीवन का जो मकसद है उस पर निर्भर है।

हमारा संविधान समानता की गारंटी देता है (अनुच्छेद 14); साथ ही राज्यों में भी इस बात को सुनिश्चित करता है कि किसी के भी साथ जाति के आधार पर भेदभाव न हो (अनुच्छेद 15 (1))।

छुआछूत का उन्मूलन कर दिया गया है और इसका किसी भी रुप में व्यवहार में प्रयोग में लाना निषिद्ध है (अनुच्छेद 17)। संविधान ये निर्देश देता है कि कोई भी नागरिक, केवल जाति या धर्म के आधार पर किसी भी अयोग्यता या निषेद्धता का विषय न बनाया जाये (अनुच्छेद 15(2))।

ये राज्यों को शैक्षिक संस्थानों में आरक्षण देने के लिये भी शक्तियाँ देता है (अनुच्छेद 15(4) और (5)); और ए.सी. के पक्ष में नियुक्तियों में (अनुच्छेद 16(4), 16(4A), 16(4B) और अनुच्छेद 335)। अनुच्छेद 330 में अनुसूचित जाति के लिये भी लोक सभा, अनुच्छेद 332 के अन्तर्गत राज्य विधान सभाओं और अनुच्छेद 243D और 340T के अन्तर्गत स्थानीय स्वनिकायों में सीटें आरक्षण के द्वारा प्रदान की जाती हैं।

इसके अलावा, सामाजिक अन्याय और शोषण के सभी रुपों से भी संविधान सुरक्षा की गारंटी देता है (अनुच्छेद 46)।

भारत में जाति प्रथा सामाजिक-आर्थिक और धार्मिक जीवन में बहुत गहराई से जुड़ा हुआ है कि इसके पीछे भगवान द्वारा दिया गया प्रमाण पत्र शामिल है। और इस व्यवस्था के खिलाफ या विपरीत कुछ भी कार्य पाप या भगवान का अपमान माना जाता है, पर वास्तविकता में ये लोगों को भगवान द्वारा दिया गया गुण नहीं है जिसका अनुकरण किया जाये। इसका सदियों से हमारी सामाजिक व्यवस्था पर बहुत शोषक और भेदभाव वाला प्रभाव पड़ा है। एक उप-उत्पाद के रुप में जाति प्रथा ने समाज में अस्पृश्यता या छुआछूत जैसी कई अन्य बुराइयों को जन्म दिया है।

जाति प्रथा भारत में ही नहीं अपितु विश्व के प्रत्येक देश में किसी न किसी रूप में अवश्य विद्यमान है । भारत में स्वाधीनता प्राप्ति के पश्चात यह अनुभव किया गया कि जाति का प्रभाव कुछ कम हो गया है लेकिन वास्तव में ऐसा नहीं हुआ बल्कि धीरे-धीरे जाति भी राजनीति को प्रभावित करने

लगी क्योंकि वयस्क मताधिकार के आधार पर निर्वाचन प्रक्रिया प्रारम्भ हुई और जातिगत संस्थाएं महत्वपूर्ण बन गई क्योंकि उनके पास अधिक संख्या में मत थे और लोकतान्त्रिक व्यवस्था में राजनीतिज्ञों के लिए इन मतों का मूल्य था ।

सामान्य जनता से मत प्राप्ति हेतु सम्पर्क सूत्र बनाने के लिए उन्होंने उसी भाषा का प्रयोग किया, जो भाषा जाति विशेष से सम्बंधित थी । अत: इस दृष्टि से जाति की भूमिका राजनीति में अत्यधिक महत्वपूर्ण हो गई ।

भारत में ही नहीं वरन् सम्पूर्ण विश्व में जाति प्रथा किसी न किसी रूप में विद्यमान अवश्य होती है। यह एक हिन्दू समाज की विशेषता है जो कि गम्भीर सामाजिक कुरीति है। जाति प्रथा अत्यन्त प्राचीन संस्था है। वैदिक काल में भी वर्ग-विभाजन मौजूद था, जिसे वर्ण-व्यवस्था कहा जाता था, यह जातिगत न होकर गुण व कर्म पर आधारित थी।

समाज चार वर्गों में विभाजित था, 'ब्राह्मण'-धार्मिक और वैदिक कार्यों का सम्पादन करते थे। 'क्षत्रिय'-इनका कार्य देश की रक्षा करना और शासन प्रबंध था। 'वैश्य'-कृषि और वाणिज्य सम्भालते थे। 'शूद्र'-शूद्रों को अन्य तीन वर्णों की चाकरी करनी पड़ती थी।

जाति-प्रथा के कारण समाज बहुत से टुकड़ों में बँट गया तथा व्यक्ति-व्यक्ति के बीच भेद-भाव की खाई खड़ी हो गई । पारस्परिक द्वेष और जातीय अहंकार के कारण भारतवासी कभी एक न हो सके और सामूहिक रूप से विदेशी आक्रमणकारियों का सामना करने में असफल रहे।

राष्ट्रहित को भुलाकर, जातीय गौरव को ही सब कुछ मान लिया गया। इस प्रथा का सबसे भयंकर परिणाम था- 'छुआछूत', जिसने समाज के एक बहुत बड़े वर्ग को आत्म-सम्मान से वंचित कर दिया । स्वतन्त्रता प्राप्ति के पश्चात देश में लोकतान्त्रिक शासन व्यवस्था की स्थापना की गई । देखने पर लगता था कि जातिवाद समाप्त हो गया है किन्तु पुन: इसने धीरे-धीरे जोर पकड़ा और वयस्क मताधिकार व्यवस्था देश में लागू कर दिये जाने के कारण यह एक राजनीतिक शक्ति के रूप में उदित हुआ।

हमारे विशाल देश में लगभग छ: हजार जातियाँ होंगी उनकी भी उप-जातियाँ होंगी जिनकी संख्या हजारों में होगी। अत; उनकी वैज्ञानिक जनगणना करना सम्भव नहीं है। क्षेत्रवाद ने जातिवाद को बढ़ाने में अहम भूमिका निभाई, जिसके आधार पर विभिन्न क्षेत्रीय पार्टियों का प्रादुर्भाव हुआ और विभिन्न क्षेत्रीय पार्टियों ने जातीय समीकरण के आधार पर जाति विशेष की हितैषी बनकर भारतीय राजनीति में अपनी पहचान बनाने में न केवल कामयाब हुई वरन सत्ता भी प्राप्त करके राष्ट्रीय पार्टियों को भी जातिवाद के फार्मूले पर राजनीति करने के लिये आकर्षित किया।

हमारे संविधान निर्माताओं ने एक विशाल संविधान की रचना की है, जिसमें अनुच्छेद 16 (4) में पिछड़ें 'वर्गों' के 'नागरिकों' को विशेष सुविधा देने की बात कही है । न कि जाति के आधार पर संविधान भी मजहबी आधार पर आरक्षण की मनाही करता है । इसका मतलब यह है हमारे संविधान के रचनाकारों की भी ऐसी कोई मंशा नहीं थी। बाबा साहिब भीम राव अम्बेडकर जी ने 'जाति का समूल नाश' नामक पुस्तक लिखकर जातिवाद पर अपने विचारधारा को प्रस्तुत किया। समाजवाद के जनक 'लोहिया' जी ने भी 'जाति तोड़ो' का नारा दिया। इन सबके प्रयास के बाद भी जातिवाद आज एक समस्या बनकर देश में खड़ा है। ऐसे में भारतीय राजनीति में इस प्रकार जातिवाद की जो अवधारणा अपनी जड़ें जमा रही है उसके दूरगामी परिणाम स्वरूप कहीं ऐसा न हो, कि भारतीय समाज जातीय संघर्ष में जूझने लगे और भारत की एकता व अखन्डता के समक्ष संकट उत्पन्न हो गई।

जातिवाद राष्ट्र के विकास में मुख्य बाधा है। जो सामाजिक असमानता और अन्याय के प्रमुख स्रोत के रूप में काम करता है। इसका समाधान अंतरजातीय विवाह के रूप में हो सकता है। अंतरजातीय विवाह से जातिवाद की जड़ें कमजोर होंगी। आधुनिक समय में किसी भी व्यक्ति के जीवन में जाति उसी समय देखी जाती है, जब उसका विवाह होता है। यदि इस बुराई का समूल नाश करना है तो ऐसे कदम उठाने होंगे जो विवाह के समय जाति की संगतता समाप्त कर दे।

कम-से-कम राजपत्रित पदों पर काम करने वाले व्यक्तियों से यह अपेक्षा की जानी चाहिए कि वे अपने आप ही जाति की सीमित परिधि से बाहर अपना विवाह करें। अंतरजातीय विवाह करने वाले को सरकारी पदों पर नियुक्ति में वरीयता दी जानी चाहिए। संविधान में संशोधन कर ऐसी व्यवस्था की जानी चाहिए जिसके तहत राजपत्रित पदों पर उन्हीं युवक युवतियों को चुना जाएं जो अपनी जाति के बाहर विवाह करने को तैयार हों।

जातिवाद मानव से मानव के बीच में दूरियां पैदा करती है। कहीं न कहीं यह हमारी मानवता को भी नष्ट करती है। अक्सर देखा जाता है कि समुदाय में यह परम्परा है अपने समूह से बाहर शादी नहीं करने की। जिससे जातिवाद को और प्रबलता प्रदान हो जाती है। जिसके कारण सामाजिक अस्तर से कमजोर और राजनीति में इसका बढ़ावा मिलता है। जातिवाद क्यों और किस लिए होना चाहिए? अगर जब कभी किसी मनुष्य को जब वह बुरी स्थिति में हो और उस वक्त उसे जब ब्लड की जरूरत होती है तो किसी समुदाय का भी ब्लड ग्रहण कर लेते हैं उस वक्त जाति नहीं देखा जाता कि यह किस समुदाय का ब्लड है। यदि गंभीर बीमारी से तड़पता हुआ व्यक्ति जो अंतिम सांसे ले रहा हो उसे अगर किडनी की या हार्ट की या और किसी चीजों की जरूरत हो तो वह उस वक्त भी यह नहीं देखता कि यह किस समुदाय का है उसे अपने शरीर से जोड़ लेता है। फिर विवाह में, खान-पान में, मेल-मिलाप में यह जात-पात का भेद-भाव आखिर क्यों ? जब मनुष्य अंतिम पड़ाव में होता है तो उसे सिर्फ अपनी जान की फिक्र होती है लेकिन जब वह स्वस्थ अवस्था में होता है तो जातिवाद, धर्म वाद जैसे चीजों में घिरा रहता है।

डी.आर. गाडगिल के शब्दों में "क्षेत्रीय दबावों से कहीं ज्यादा खतरनाक बात यह है कि वर्तमान काल में जाति व्यक्तियों को एकता के सूत्र में बांधने में बाधक सिद्ध हुई है।" अत: जातिवाद देश, समाज और राजनीति के लिए बाधक है। लोकतन्त्र व्यक्ति को इकाई मानता है न कि किसी जाति या समूह को। जाति और समूह के आतंक से मुक्त रखना ही लोकतन्त्र का आग्रह है ।

यदि देखा जाए तो भारतीय राजनीति में भी कहीं ना कहीं जातिवाद एक चुनौती बनकर खड़ा है। राजनीतिक व्यक्तियों या नेतृत्व को जाति वादी संस्थाओं, संगठनों और आयोजनों से दूर रहना चाहिए तथा सरकार द्वारा जाति वादी संगठनों, सभाओं और आयोजनों को हतोत्साहित करना चाहिए, किंतु भारतीय राजनीति में यह आज भी बहुत दुखद है कि उनके विराट व्यक्तित्व को एक जाति विशेष तक सीमित करने की कोशिश की जाती है। समझना होगा कि जब तक समाज से जातिवाद का अंधेरा नहीं मिटेगा, तब तक राष्ट्रीय एकता का सूरज उदित नहीं होगा।

संदर्भ सूची

1. एस. प्रियादर्श (essaysinhindi.com)
2. देवेन्द्र सुधाकर (ई-पत्रिका)